अधिगम
अंक 18 : मार्च 2021

अपभ्रंश भाषा के महाकवि पुष्पदंत और उनकी रचनाएँ

आलोक सिंह*

महाकवि पुष्पदंत अपभ्रंश भाषा के एक महत्त्वपूर्ण कवि थे। आठवीं शताब्दी के महाकवि स्वयंभू के पश्चात् अपभ्रंश भाषा के कवियों में इनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। महाकवि पुष्पदंत के जन्म–स्थान के विषय में अभी तक कोई स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध नहीं हो सका है। अधिकतर विद्वान पुष्पदंत का समय दसवीं शताब्दी मानते हैं परंतु प्रो0 हीरालाल जैन कवि का समय नवीं शताब्दी स्वीकार करते हैं। कवि ने अपने महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'महापुराण' की आरम्भिक संधि में जो परंपरा उल्लेखित की है, उससे यह बात साफ–साफ मालूम हो जाती है कि उन्हें स्वयंभू के काव्य की जानकारी थी और उन्होंने कालिदास, भारवि, भास, व्यास, संस्कृत कवियों के साथ स्वयंभू का नाम भी बड़े आदर से लिया है।

'महापुराण' ग्रंथ में उल्लेख किये गये विवरण के अनुसार महाकवि पुष्पदंत कश्यपगोत्रिय ब्राह्मण कुल में पैदा हुए थे। उनके पिता का नाम केशव भट्ट तथा माता का नाम मुग्धा देवी था। अपने ग्रंथ 'महापुराण' की 102वीं संधि में अपने परिचय का उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं–

''सिद्धिवि लासिणिमण हर दूएं
मुद्धाएवीतणुसंभूएं
णिद्धणसधणलोयसमचित्तें
सध्वजीवणिककारणमित्तें
सद्दसलिलपरिवदृियसोत्तें
केसवपुत्तें कासवगोत्तें
विमलसरासयजणियविलासें
सुण्णभवणदेवलयणिवासें
कलिमलपबलपडलपरिचत्तें

* हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग, मेघालय

णिग्धरेण णित्पुत्तकलत्तें
णइवावीतलायकयणहाणें
जरचीवरवक्कलपरिहाणें
धीरे धूलीधूसरियंगें
दूरयरुज्झियदुज्जणसंगे
महिसयणयलें कर पंगुरणें
मग्गियपंडियपंडिय मरणें
मण्णखेडपुरवरिजिवसंते
मणि अरहंत धम्मु झायंतें
भरहसण्णपिज्जें णयणिलएं
कटवपबंधजणियजणपुलएं
पुप्फयंतकइणा चुयपंकें
जइ अहिमाणमेरुणामंकें
कयउं कव्वु भत्तिट्ठें परमत्थें
जिणपयपंकयमउलियहत्थें
कोहणसंवच्छरि आसाढइ
दहमइ दियहि चंदरूइरूढइ।।''

—म0पु0 102/14/418—19

अर्थात् सिद्धिरूपी विलासिनी के सुंदर दूत, मुग्धादेवी के शरीर से उत्पन्न निर्धन और धनवान में समानचित्त धारण करने वाले, समस्त जीवों के अकारण मित्र, शब्दरूपी जल के बढ़ते हुए स्रोत से युक्त, केशव के पुत्र, कश्यपगोत्रवाले, विमल सरस्वती से विलास करने वाले, शून्य भवन और देवमन्दिरों में निवास करने वाले, कलिमल के प्रबल पटल से दूर, पुत्रकलत्र से रहित, नदी, बावड़ी और तालाब के जल में स्नान करने वाले, पुराने वस्त्र और वल्कलों के परिधानों को धारण करने वाले, धीर, धूलधूसरित शरीर, दुर्जन के संग को दूर से छोड़ने वाले धरती रूपी शय्या और हाथ के प्रावरण वाले पंडितों से पण्डितरमण माँगने वाले, मान्यखेट नगरी में निवास करने वाले, अपने मन में अर्हन्त का ध्यान करने वाले, भरत के अपने गृह में निवास करने वाले, नय के घर काव्य रचना से लोगों को पुलक उत्पन्न करने वाले, पाप से रहित, लोक में अभिमानमेरु नाम से विख्यात, जिनवर के चरणकमलों में हाथ जोड़े हुए परमार्थ और भक्ति में स्थित पुष्पदंत ने

क्रोधन संवत्सर के असाढ़ माह की चन्द्रमा की कांति से युक्त दसवीं के दिन इस काव्य की रचना की।''[1]

उपर्युक्त विवरण से यह भी ज्ञात होता है कि महाकवि पुष्पदंत का अपना कोई घर नहीं था या था तो वे उसे त्याग चुके थे। इसके साथ–साथ वे पुत्र आदि से रहित, अविवाहित, नदियों–वापियों–तालाबों में स्नान करने वाले, जीर्ण–वस्त्रों को धारण करने वाले अर्थात् अत्यंत गरीब थे। इनके माता–पिता पहले शिव के भक्त थे परंतु बाद में किसी गुरु के उपदेश से इन्होंने जैन धर्म ग्रहण कर लिया। कुछ विद्वानों का अनुमान है कि पुष्पदंत भी अपने माता–पिता की भाँति जीवन की प्रारम्भिक अवस्था में शैव रहे होंगे। इस प्रसंग में जैन–साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान नाथूराम प्रेमी और डॉ0 राजनारायण पाण्डेय ने लिखा है–''कवि के आश्रयदाता महामात्य भरत ने जब उनसे महापुराण के रचने का आग्रह किया, तब कहा कि तुमने पहले भैरव नरेन्द्र को माना है और उसको पर्वत के समान धीर वीर और अपनी श्री विशेष से सुरेन्द्र को जीतने वाला वर्णन किया। इससे जो मिथ्यात्व भाव उत्पन्न हुआ, उसका यदि तुम इस समय प्रायश्चित कर डालो, तो तुम्हारा परलोक सुधर जाय (म0पु0 1/6/10–12) इससे मालूम होता है कि पहले पुष्पदंत शैव होंगे और शायद उसी अवस्था में उन्होंने भैरव नरेन्द्र की कोई यशोगाथा लिखी होगी।''[2] कालांतर में पुष्पदंत किसी जैन मुनि के संसर्ग में आने के बाद जैन धर्म में दीक्षित हो गए और राष्ट्रकूट राजाओं की राजधानी मान्यखेट में आकर उन्होंने अपने आश्रयदाता आमात्य भरत के अनुरोध पर जिन भक्ति से प्रेरित होकर 'महापुराण' का सृजन किया।

''महाकवि पुष्पदंत शरीर से दुर्बल, बालचंद्र के समान कृश, श्यामल और अत्यंत कुरूप थे। परन्तु उनका मुख सदैव नवीन कमल के सदृश प्रफुल्लित रहता था।''[3] उनकी दंतपंक्ति समस्त वातावरण को ध्वलित करने की कान्ति से युक्त थी। इसीलिए शायद उनका नाम पुष्पदंत पड़ा है। ''महाकवि पुष्पदंत स्पष्टवादी और उग्र स्वभाव के व्यक्ति थे, जो उनके उपाधि नाम 'अभिमान मेरु, अभिमान चिह्न, कविकुल तिलक आदि से स्पष्ट हो जाता है। पुष्पदंत स्वभाव से अक्खड़ और निसंग रहे होंगे, इसीलिए सांसारिक उपलब्धियों की चिंता कवि पुष्पदंत को नहीं रही, बल्कि वे निस्वार्थ प्रेम और सम्मान के अभिलाषी रहे।[4] पुष्पदंत कवि के अतिरिक्त तीन अन्य पुष्पदंत नाम के कवियों का भी उल्लेख मिलता है–

प्रथम पुष्पदंत प्रसिद्ध शिव महिम्न स्तोत्र के रचयिता हैं। ''इस स्तोत्र का एक श्लोक राजशेखर (10वीं शताब्दी) ने काव्य मीमांसा में उद्धृत किया है, अतः ये राजशेखर से पूर्व हुए होंगे और निश्चय ही हमारे कवि के पूर्ववर्ती हैं।''[5]

''दूसरे पुष्पदंत षड्खंडागम के रचयिता हैं, जिन्होंने भूतबलि के साथ अपने गुरु घरसेन (748 ई0) से महाकर्म प्रकृति नामक पाहुड़ के 24 अधिकारों का अध्ययन किया था।''[6] अतः ये भी पुष्पदंत कवि से पूर्व हुए थे।

''तीसरे पुष्पदंत का उल्लेख डॉ0 अंबा शंकर नागर ने अपने शोध–ग्रंथ गुजरात की हिन्दी सेवा में किया है।''[7] ये एक गुजराती कवि थे। इनकी रचना का कोई विस्तृत विवरण प्राप्त नहीं है। महापुराण ग्रंथ के कवि पुष्पदंत ने अपनी समस्त काव्य–रचना मान्यखेट (दक्षिण) में रहकर की थी। गुजरात से कवि का कभी कोई सम्बन्ध नहीं रहा होगा, इसमें संदेह ही है। अतः यह कवि निश्चय ही हमारे कवि से भिन्न ठहरते हैं।

कर्नल टाड के राजस्थान के आधार पर शिवसिंह सेंगर ने सं0 770 (713 ई0) के अवन्ती के राजा मान के एक दरबारी कवि पुष्पभाट का उल्लेख किया है। डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस बारे में लिखा है कि–''जान पड़ता है पुष्पदंत जिस राष्ट्रकूट राजा कृष्ण के आश्रित थे, उनकी राजधानी मान्यखेट पर से राजा का नाम मान समझ लिया गया है और सभा कवि होने के कारण उन्हें भाट कह दिया गया है।''[8] आगे द्विवेदी जी ने हेलीकरेटी के शिलालेखों के आधार पर उज्जयिनी (अवन्ती) पर मान्यखेट का शासन सिद्ध करते हुए लिखा है कि हो सकता है कि बाद में मान–कवि पुष्प का यशमात्र अवशिष्ट रह गया हो और पूरी कहानी भुला दी गयी हो। परन्तु यह अनुमान ही अनुमान है।

यद्यपि आचार्य द्विवेदी का यह अनुमान ही है, फिर भी इस विषय में इतना कहना अनुचित न होगा कि सं0 770 वि0 में राष्ट्रकूट सिंहासन पर महाराज कर्क आसीन थे, कृष्णराज नहीं।[9] दूसरे हमारे कवि भाट हो तो सकते हैं, क्योंकि उन्होंने अपने पिता को केशवभट्ट कहा है, परन्तु वे दरबारी भाट कभी नहीं रहे। ''राहुल जी के शब्दों में वे अपने अभिमानी स्वभाव के कारण महाराज कृष्ण के दरबार में कभी अपने मन से गये होंगे, इसमें संदेह ही मालूम होता है।''[10] वास्तव में पुष्पदंत महामात्य भरत के आश्रय में रहे थे। राजाओं के तो वे कटु आलोचक थे। अतः अवंती दरबार के पुष्पभाट हमारे कवि से भिन्न कोई अन्य व्यक्ति होंगे।

जैन साहित्य और इतिहास के लेखक नाथूराम प्रेमी ने महाकवि पुष्पदंत के मूल स्थान के रूप में बरार नामक स्थान को बताया है। जिसका आधार वे कवि की भाषा में प्राचीन मराठी के शब्द रूपों को मानते हैं।

पुष्पदंत की रचनाएँ :–

महाकवि पुष्पदंत की मुख्य रूप से तीन रचनाएँ उपलब्ध होती हैं–महापुराण, णायकुमारचरिउ और जसहर चरिउ। इन प्रामाणिक रचनाओं के अतिरिक्त विद्वानों द्वारा पुष्पदंत की कुछ अन्य रचनाएँ भी बताई जाती हैं। ''महापुराण के छठवें कड़वक में, बीरूभइरवणरिहु' शब्द आया है, उस पर प्रभाचन्द्रकृत की टिप्पणी है–''वीर भैरव अन्य कश्चिद् दुष्ट महराजो वर्तते, कथा–मकरन्द नायकों का कश्चिदाजास्ति।''[11]

इससे अनुमान होता है कि पुष्पदंत द्वारा रचित 'कथा–मकरन्द' नाम का भी कोई ग्रन्थ हो सकता है जिसमें इस राजा को पुष्पदंत ने अपनी शक्ति से सुरेन्द्र को जीतने वाला और पर्वत के समान धीर बतलाया है। महापुराण में वर्णित भरत मंत्री ने इसी को लक्ष्य करके कहा कि तुमने उस राजा की प्रशंसा करके जो मिथ्याभाव उत्पन्न किया है उसका प्रायश्चित करने के लिए महापुराण की रचना करो। इसी प्रकार डॉ0 हीरा लाल जैन ने 'जसहर चरिउ' की निम्नलिखित पंक्तियों के आधार पर पुष्पदंत द्वारा धन तथा नारी विषयक अर्थात् भोग–विलास एवं श्रृंगार विषयक रचनाएँ लिखे जाने की संभावना व्यक्त की है–

''णण्णहोमंदिरि णिवसंतु संतु, अहिमाणमेरु कई पुप्फंयतु।
चिंतई य ही धण–णारी–कहाए, पज्जत्तउ कयदुक्किय पहाए।
कह धम्मणिबद्धी का वि कहनि, कहियाइँ जाइँ सिवसोक्यु लहमि।।''[12]

–(ज0च0 1/1/4)

''डॉ0 रामकुमार वर्मा ने अपने आलोचनात्मक इतिहास में महाकवि पुष्पदंत के एक अन्य ग्रंथ का उल्लेख किया है।''[13] जो उपलब्ध रूप में नहीं पाया जाता है।

ग्रंथ परिचय

महापुराण–'महापुराण' पुष्पदंत की उपलब्ध रचनाओं में सर्वप्रथम और विशाल रचना है। ''कवि ने इस ग्रंथ की रचना राष्ट्रकूट सम्राट कृष्ण तृतीय (उपनाम तुडिग, 939–968 ई0) के राज्यकाल में, उनके मन्त्री भरत की प्रेरणा से तथा उन्हीं के आश्रय में रहते हुए, मान्यखेट नगर में की थी।''[14] इस ग्रंथ की रचना में कवि को लगभग 6 वर्षों का समय लगा।

इस ग्रंथ में 102 संधियाँ हैं, जो 1907 कड़वकों में पूर्ण हुई हैं। इस ग्रंथ का सर्वप्रथम प्रकाशन डॉ0 पी0एल0 वैद्य के संपादन में माणिकचन्द्र दिगम्बर जैन ग्रंथमाला समिति बम्बई से तीन भागों में क्रमशः 1937, 1940 और 1941 में प्रकाशित हुई थी तथा पुनः डॉ0 देवेन्द्र कुमार जैन द्वारा हिन्दी अनुवाद सहित भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली से क्रमशः 5 भागों में प्रकाशित हुआ। पुष्पदंत ने इस ग्रंथ का नामकरण 'तिसट्ठि–महापुरिस–गुणालंकार' (त्रिषष्ठि–महापुरुष–गुणालंकार) भी किया है। इस ग्रंथ की महत्ता का उल्लेख करते हुए कवि ने स्वयं लिखा है कि–''इस रचना में प्राकृत के लक्षण, समस्त नीति, छंद, अलंकार, रस, तत्वार्थ–निर्णय आदि सब कुछ हैं, जो इसमें नहीं है, वह अन्यत्र भी दुर्लभ है।''[15] महापुराण में 24 तीर्थंकर, 12 चक्रवर्ती, 9 वासुदेव, 9 प्रतिवासुदेव और 9 बलदेव इन 63 महापुरुषों के चरित्रों का वर्णन किया गया है। यह ग्रंथ दो खंडों में विभक्त है– आदिपुराण और उत्तरपुराण। प्रथम खंड आदिपुराण में आदि तीर्थंकर ऋषभदेव तथा अन्य तीर्थंकरों और महापुरुषों की गाथाओं का वर्णन किया गया है। आदिपुराण प्रथम 37 संधियों में समाप्त हुआ है। दूसरे खंड उत्तरपुराण में राम तथा कृष्ण के चरित्रों के साथ–साथ उनके समकालीन अन्य महापुरुषों के जीवन चरित्रों का वर्णन है। आदिपुराण में प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के जन्म से लेकर महानिर्वाण तक की कथा के अतिरिक्त उनके दो पुत्रों भरत और बाहुबलि के भी क्रियाकलापों का वर्णन है। ग्रंथ के प्रथम दो संधियों में परंपरानुसार कवि का आत्मनिवेदन, विनय प्रदर्शन, आश्रयदाता की प्रशस्ति, दुर्जन–निंदा, सज्जन प्रशंसा, ग्रंथ रचना का उद्देश्य वर्णित करने के साथ–साथ ऋषभदेव के अवतार लेने के पूर्व की भूमिका का उल्लेख किया गया है। आदिपुराण की दूसरी ही संधि में पुष्पदंत ने 14 कुलकरों के वर्णन के बाद अंतिम कुलकर नाभि तथा उनकी पत्नी मरुदेवी की कथा कही है। तीसरी संधि में ऋषभ का जन्मोत्सव तथा चतुर्थ संधि में उनके विवाह वृत्तान्तों का वर्णन हुआ है। ग्रंथ की पाँचवीं संधि में जसवई के पुत्र भरत तथा सुनंदा के पुत्र बाहुबलि के उत्पन्न होने तथा ऋषभदेव के राजा बनाए जाने का वर्णन है, छठीं संधि में देवराज इंद्र द्वारा भेजी गई नीलांजना नाम की अप्सरा द्वारा दरबार में नृत्य करते समय मृत्यु देखकर ऋषभ के वैराग्य का चित्रण है। सातवीं संधि में महाकवि पुष्पदंत ऋषभदेव के द्वारा राज्य त्याग तथा भरत को अयोध्या और बाहुबलि को पोदनपुर का राज्य सौंपने का वर्णन करते हैं तो आठवीं संधि में नमि तथा विनमि को

नागराज द्वारा वैतढ्य पर्वत के क्षेत्र को दिये जाने का वर्णन हुआ है। नौवीं संधि में ऋषभ द्वारा इक्षु, रसपान कठोर तपस्या द्वारा कैवल्य ज्ञान प्राप्ति, देवताओं द्वारा समवसरण रचना और जिन–स्तुति का वर्णन किया गया है। दसवीं तथा ग्यारहवीं संधियों में भरत की आयुधशाला में चक्ररत्न का प्रकट होना और ऋषभदेव द्वारा भरत को जैन सिद्धान्तों के उपदेश के साथ ही पृथ्वी के द्वीपों–समूहों आदि का विस्तार से वर्णन किया गया है। बारहवीं से पन्द्रहवीं संधि तक महाकवि पुष्पदंत ने सम्राट भरत की विजय का वर्णन किया है तथा सोलहवीं संधि में सम्राट भरत के चक्ररत्न द्वारा अयोध्या में प्रवेश न करने और पुरोहितों द्वारा भाइयों पर विजय न प्राप्त करने के कारण दिग्विजय को अपूर्ण बताने के बाद भरत द्वारा भाइयों के पास दूत भेजे जाने का चित्रण है। सत्रहवीं तथा अठारहवीं संधियों में भरत और बाहुबलि के द्वंद्व–युद्ध का वर्णन है, जिसमें सम्राट भरत नेत्र, जल तथा मल्लयुद्ध में पराजित होते हैं, तो अपने बड़े भाई को पराजित करने के कारण बाहुबलि को आत्मग्लानि होती है और वे वैराग्य धारण कर लेते हैं।

बाहुबलि के तप के उपरांत कैवल्य ज्ञान होने पर सम्राट भरत उनकी वंदना–स्तुति करते हैं। उन्नीसवीं संधि में राजा भरत ब्राह्मणों को दान देते हैं और उनके द्वारा प्रश्न किये जाने पर ऋषभदेव आने वाले समय जन–समुदाय के नैतिक पतन का चित्रण करते हैं। बीसवीं से सत्ताइसवीं संधि में ऋषभदेव अपने पूर्व जन्मों का वर्णन करते हैं, तो अठाइसवीं से छत्तीसवीं संधि तक बाहुबलि के पुत्र जय तथा उसकी पत्नी सुलोचना की कथाएँ महाकवि पुष्पदंत ने चित्रित की हैं। सैंतीसवीं संधि में सम्राट भरत एक स्वप्न देखते हैं, जिसका फल ज्योतिषियों द्वारा ऋषभ–निर्वाण बताया जाता है तो भरत तुरंत कैलाश पहुँचते हैं। कैलाश पहुँचकर भरत देखते हैं कि उनका स्वप्न सच हुआ है और ऋषभदेव को निर्वाण प्राप्त हो गया है। भरत अयोध्या लौटकर अपने पुत्र को राज्य सौंप देते हैं और स्वयं जिन–दीक्षा ग्रहण करते हैं तथा अंत में कैवल्य ज्ञान प्राप्त करके वे भी निर्वाण प्राप्त करते हैं। इस प्रकार आदिपुराण की सैंतीस संधियों में पूर्णतः ऋषभदेव के जीवन–चरित्र को महाकवि पुष्पदंत ने चित्रित किया है।

महापुराण के दूसरे खंड उत्तरपुराण में पुष्पदंत ने पैसठ संधियों में शेष तेईस तीर्थंकरों तथा अन्य महापुरुषों की गाथाओं को चित्रित किया है। आदिपुराण की रचना समाप्त करके कवि पुष्पदंत कुछ समय ग्रंथ–रचना का कार्य छोड़ देते हैं, तो एक दिन स्वप्न में उन्हें स्वयं देवी सरस्वती काव्य–रचना करने की आज्ञा देती हैं और उनके आश्रयदाता अमात्य भरत भी कवि पुष्पदंत को पुनः काव्य–रचना की प्रेरणा देते हैं, तब महाकवि

पुष्पदंत उत्तरपुराण की रचना में प्रवृत्त होते हैं। अड़तीसवीं संधि में सगर एवं उनके साठ हजार पुत्रों के चरित्र वर्णित किए गए हैं। संधि 40 से 47 तक तीर्थंकर संभव, अभिनंदन, सुमति, पद्मप्रभु, सुपार्श्व, चंद्रप्रभ तथा सुविधि के जीवन–चरित्र का वर्णन हुआ है, तो अड़तालीसवीं संधि में दसवें तीर्थंकर शीतलनाथ के जीवन–चरित का वर्णन करने के बाद कुछ समय तक जैन धर्म की अधोगति का उल्लेख पुष्पदंत ने किया है। उनचास से बावनवीं संधि तक तीर्थंकर श्रेयांस, विजय (प्रथम बलदेव), त्रिपृष्ट (प्रथम वासुदेव) तथा अश्व ग्रीव (प्रथम प्रतिवासुदेव) के चरित्र हैं। तिरपनवीं संधि में बारहवें तीर्थंकर वासुपूज्य का चरित्र–चित्रण हुआ है।

चौवन से लेकर पैंसठवीं संधि तक महाकवि पुष्पदंत ने तीर्थंकरों में विमल अंनत, धम्म, शांतिनाथ, कुंथु, अर, मल्लि तथा सुब्रत के साथ ही बलदेवों अचल, धर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदीशेष तथा नंदी मित्र के साथ–साथ वासुदेव द्विपृठ, स्वयंभू, पुरुषोत्तम, पुरुष सिंह, पुंडरीक तथा दत्त और प्रतिवासुदेव तारक, मधु, मधुसूदन, मधुक्रोड, निशुंभ तथा बलि के जीवन–चरितों का चित्रण करने के बाद संधि 69 से 79 तक राम–कथा का चित्रण किया है।

इसके बाद अस्सीवीं संधि में इक्कीसवें तीर्थंकर नमी की कथा कहकर महाकवि पुष्पदंत ने इक्यासीवीं से बानबेवीं संधि तक हरिवंशपुराण की कथा के साथ–साथ बाइसवें तीर्थंकर नेमी का वृत्तांत दिया है। संधि 93–94 में तेईसवें तीर्थंकर पार्श्व तथा संधि 95 से 97 तक अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर के जीवन–चरित्रों का वर्णन महाकवि पुष्पदंत ने किया है। अंतिम 98 से 102वीं संधि तक राजा श्रेणिक आदि की कथाओं को सविस्तार महाकवि पुष्पदंत ने अपने इस ग्रंथ उत्तरपुराण में चित्रित किया है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि महाकवि पुष्पदंत का यह ग्रंथ महापुराण जैन धर्म के 63 शलाका पुरुषों के जीवन–चरित्र का ऐसा स्वरूप है, जिसमें कवि ने जैन धर्म के सिद्धान्तों, दार्शनिक मान्यताओं, सामाजिक परंपराओं, सांस्कृतिक विशेषताओं और राजनीतिक स्थितियों का विस्तार से वर्णन करते हुए अपने युग को वाणी दी है। कवि ने काव्य कला की संरचना में भी अपनी अलग पहचान बनाई है। महापुरुषों के जन्म स्थानों, विजय यात्राओं, तपोभूमियों उनके सात्विक तथा चमत्कृत जीवन घटनाओं, राज–रानी के रूप वर्णनों तथा युद्ध की विभीषिका आदि प्रसंगों को नवीन काव्य रूपों के माध्यम से उद्‌घाटित किया है।

णायकुमार चरिउ

चरित काव्यों में परम्परा में णायकुमार चरिउ अपना विशेष महत्त्व रखता है। महाकवि पुष्पदंत ने अपने इस ग्रंथ की रचना महापुराण के पश्चात् की। इस ग्रंथ की रचना पुष्पदंत ने अपने आश्रयदाता भरत के पुत्र और राष्ट्रकूट साम्राज्य के गृहमंत्री नन्न के आश्रय में रहकर की थी। इसका उल्लेख इस प्रकार है–

''णण्णहो मंदिरि जिवसंतु संतु।
अहि माणमेरु गुणगणमहंतु।।''

''नन्न के अतिरिक्त गुण, धर्म, नाइल्ल आदि व्यक्तियों ने भी कवि को ग्रंथ रचने की प्रेरणा दी थी।''[16] यह ग्रंथ सर्वप्रथम डॉ0 हीरालाल जैन द्वारा संपादित होकर जैन पब्लिकेशन सोसायटी कारंजा, बरार से सन् 1933 में प्रकाशित हुआ तत्पश्चात् इसका द्वितीय संस्करण हिन्दी अनुवाद तथा शब्दकोश आदि के साथ डॉ0 हीरालाल जैन के द्वारा सम्पादित होकर भारतीय ज्ञानपीठ से सन् 1972 ई0 में प्रकाशित हुआ।

''महाकवि पुष्पदंत के इस चरितकाव्य णायकुमार चरिउ में कुल नौ संधियाँ हैं, जिनमें 150 कड़वक और उनमें 2206 पद रचे गये हैं। काल की प्रत्येक संधि का शीर्षक उसमें वर्णित मुख्य घटना के आधार पर रखा गया है।''[17]

इस ग्रंथ में नागकुमार की कथा के साथ–साथ श्रुत पंचमी के महात्म्य को बताया गया है। कथानक की शुरूआत मगधदेश से होती है। मगध में राजा जयधर अपनी रानी विशाल नेत्रा और पुत्र श्रीधर के साथ राज्य करता था। राजा का गिरिनगर अर्थात् सौराष्ट्र के राजा की पुत्री पृथ्वी देवी के साथ विवाह होता है। पृथ्वी देवी से नागकुमार नामक एक पुत्र उत्पन्न होता है। अकस्मात् बालक के कुँए में गिर जाने पर एक नाग के द्वारा बालक की रक्षा की जाती है। इसी कारण बालक का नाम नागकुमार रखा गया। नागकुमार कई प्रकार की विद्याओं और कलाओं में शिक्षा प्राप्त करता है। इसके बाद युवावस्था में पहुँचने पर अनेक सुंदरियों से विवाह करता है। नागकुमार केवल पराक्रम को देखकर श्रीधर अपने युवराज बनने की इच्छा को छोड़ देता है और उससे ईर्ष्या करने लगता है तथा मारने का प्रयत्न करता है, परन्तु श्रीधर को इस कार्य में सफलता नहीं मिलती है। चौथी संधि से लेकर आठवीं संधि तक नागकुमार के अनेक वीर कर्मों और चमत्कारों का वर्णन है। अंतिम संधि में नागकुमार का विवाह राजकुमारी लक्ष्मीमती से भी होता है। मुनि पिहिताश्रव अनेक दार्शनिक

सिद्धान्तों और धार्मिक उपदेशों का व्याख्यान देते हैं और नागकुमार के पूर्व जन्म की कथा कहते हैं। पंचमी व्रत के महत्व का प्रतिपादन करते हैं और बताते हैं कि पूर्व जन्म में नागकुमार इसी व्रत का पालन करते हुए मर गए और देवत्व को प्राप्त होते हैं। उनके शोक में डूबे हुए माता–पिता को सांत्वना देने के लिए वे फिर पृथ्वी पर आते हैं। तब से वह भी धर्म में लीन हो गए और अंत में उन्होंने मोक्ष को प्राप्त किया। लक्ष्मीमती उनकी पूर्वजन्म की पत्नी थीं। इसी अवसर पर मंत्री जयधर घर से आता है और नागकुमार अपने घर लौटते हैं। अनेक वर्षों तक अपनी अनेक पत्नियों के साथ आनंदपूर्वक जीवन बिताते हुए राज्योपभोग करते हैं और अंत में तपस्वी होकर मोक्ष प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार कुल नौ संधियों के इस अत्यंत रोचक चरितकाव्य के माध्यम से महाकवि पुष्पदंत ने जैन धर्म में अत्यंत पवित्र मानी जाने वाली 'श्री पंचमी कथा' का वर्णन किया है। जिसमें नागकुमार के माध्यम से अनेक जीवन मूल्यों की स्थापना भी कवि के द्वारा की गई है। नामवर सिंह इस ग्रंथ के संदर्भ में लिखते हैं कि–''कथा में ईर्ष्या–कलह, शौर्य, स्नेह आदि अनेक लौकिक दशाओं के अतिरिक्त पातालपुरी, नागलोक आदि की बहुत सी अलौकिक घटनाएँ भी वर्णित हैं वर्णन कहीं–कहीं बड़ा ही यथार्थवादी दिखाई पड़ता है।''[18] ग्रंथ से तत्कालीन सामाजिक अवस्था पर भी पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। लोग स्वप्न ज्ञान तंत्र, मंत्रादि के साथ–साथ साधु संतों द्वारा दी गई भविष्यवाणी, चमत्कारों और अलौकिक घटनाओं में विश्वास करते थे। ग्रंथ में छंद, अलंकार, भाषा का प्रयोग महापुराण के समान ही मिलता है। इस प्रकार कवि के ग्रंथ में हिंसामूलक धर्मों पर जैन धर्म की विजय दिखाई गई है।

जसहरचरिउ

जसहर चरिउ पुष्पदंत की तीसरी रचना है। कवि ने इसे भी नन्न के आश्रय में तथा उन्हीं के भवन में रहकर लिखा था–

''णण्हो मंदिरि जिवसंतु संतु।
अहिमाणमेरु कई पुप्फयंतु।।''[19]

जस0 1/1/4

''कवि ने इस ग्रंथ में भी रचना काल नहीं दिया है, परन्तु निश्चय ही इसकी रचना मान्यखेट के पतन (972 ई0) के पूर्व तथा णायकुमार चरिउ की रचना के पश्चात् हुई थी।''[20]

यह ग्रंथ सर्वप्रथम सन् 1931 ई0 में कारंजा जैन पब्लिकेशन, कारंजा से डॉ0 परशुराम लक्ष्मण वैद्य द्वारा सम्पादित होकर अंग्रेजी की भूमिका के साथ प्रकाशित हुआ था। इस ग्रंथ का द्वितीय संस्करण स्व0 डॉ0 हीरालाल जैन द्वारा सम्पादित होकर भारतीय ज्ञानपीठ नई दिल्ली से हिंदी अनुवाद तथा शब्दकोश आदि के साथ 1972 ई0 में प्रकाशित हुआ। ''महाकवि पुष्पदंत द्वारा रचित इस चरितकाव्य जसहरचरिउ में कुल चार संधियाँ हैं, जिनमें महाकवि ने कुल 138 कड़वक रचकर उनमें 2144 पदों की रचना की है। महाकवि पुष्पदंत की यह कृति णायकुमार चरिउ से परिमाण में छोटी है।''[21]

महाकवि पुष्पदंत के इस चरित काव्य जसहर चरिउ की रचना का उद्देश्य वास्तव में कौल धर्म के सिद्धान्तों पर जैन धर्म की विजय को दर्शाता है, परन्तु कवि ने यत्र–तत्र प्रसंग आने पर अनेक स्थलों पर ब्राह्मण धर्म और यज्ञ आदि के माध्यम से की जाने वाली हिंसा का भी प्रबल खंडन किया है। ''महाकवि पुष्पदंत के इस काव्य जसहरचरिउ का कथानक पूर्ववर्ती णायकुमार चरिउ की तुलना में अत्यंत जटिल और उलझा हुआ है। केले के पत्तों की तरह ही जसहरचरिउ की कथाओं में अनेक उपकथाएँ तथा सहकथाएँ इस प्रकार गुँथी हुई हैं कि पाठक उलझ जाता है।''[22]

पुष्पदंत द्वारा रचित जसहरचरिउ के अतिरिक्त दो रचनाएँ मिलती हैं। जिनकी विषयवस्तु में जहसरचरिउ के नायक यशोधर के चरित्र का उल्लेख मिलता है। डॉ0 हीरालाल जैन जसहर चरिउ की प्रस्तावना में लिखते हैं–''इस समय मेरे सम्मुख सोमदेव कृत यशस्तिलक और पुष्पदंत कृत जसहर चरिउ के अतिरिक्त हरिषेण कृत बृहद कथाकोष (भारतीय विद्याभवन बम्बई, 1943) भी उपस्थित है जिसमें कुल 157 कथाएँ हैं और उनमें 63वीं कथा यशोधर–चरित हैं जो 305 संस्कृत पद्यों में पूर्ण हुआ है। इसका रचनाकाल ग्रंथ की प्रशस्ति में ही संवत् 989 व शक 853 दिया हुआ है जिससे वह सन् 931–32 की रचना सिद्ध होती है। इस प्रकार ये तीनों रचनाएँ दसवीं शती की हैं व बहुत थोड़े वर्षों के अन्तर से लिखी गई हैं। इनमें भी सबसे पहले हरिषेण कृत, दूसरी सोमदेव कृत और तीसरी प्रस्तुत रचना पुष्पदंत कृत है। इनके बीच कथा का संकोच विस्तार ध्यान देने योग्य है।''[23]

जसहरचरिउ ग्रंथ में पुष्पदंत ने सोमदेव की रचना का अनुसरण किया है, वहीं दूसरी तरफ पुष्पदंत ने नायक–नायिका का वर्णन हरिषेण के अनुसार पशु–योनियों के आधार पर वर्णन किया है।

प्रस्तुत ग्रंथ का कथानक इस प्रकार है कि कवि मंगलाचरण में 24 तीर्थंकरों का स्मरण करके यौधेय देश तथा उसकी राजधानी रायपुर का वर्णन करता है। वहाँ का राजा मारिदत्त है। एक समय भैरवानंद नामक कापालिक राज–सभा में आकर अपनी सिद्धियों तथा चमत्कारों का वर्णन करता है। राजा मारिदत्त आकाशगामिनी विद्या प्राप्त करने की प्रार्थना करते हैं। इस पर भैरवानंद उसे देवी के सम्मुख अनेक जीव–मिथुनों की बलि देने की सलाह देता है। राजा की आज्ञानुसार उसके कर्मचारी अनेक जीवों के साथ सुदत्त नामक मुनि के दो क्षुल्लक शिष्यों–बालक अभयरुचि तथा बालिका अभयमति को बलिदान हेतु पकड़कर लाते हैं। मारिदत्त उनके रूप को देखकर चकित रह जाता है और उनसे अपना परिचय देने की प्रार्थना करता है।

अभयरुचि अपनी जीवन–गाथा सुनाते हैं–

अभयरुचि पूर्व जन्म में अवन्ती के राजा यशोर्ह के पुत्र जसहर (यशोधर) थे। उनका विवाह अमृतमती से हुआ था। पिता के पश्चात् जसहर राजा हुए।

संधि 2 में रानी अमृतमती का एक दरिद्र कुबड़े से प्रेमालाप करने का वर्णन है। जसहर उनकी प्रेमलीला से क्षुब्ध होकर वैराग्य लेना चाहते हैं। माता के निषेध करने पर भी वे अपने निश्चय पर दृढ़ रहते हैं। इसी समय रानी अमृतमती, जसहर तथा उनकी माता को विष देकर मार डालती है। आगामी जन्म में माता और पुत्र, सर्प–नेवला होते हैं। उनका पुत्र जसवई राजा बनता है।

संधि 3 में जसहर तथा उसकी माता के अनेक जन्मों की कथाएँ हैं। अन्त में दोनों के जीव जसवई की रानी के गर्भ से अभयरुचि तथा अभयमति के रूप में उत्पन्न होते हैं।

सुदत्त नामक मुनि द्वारा जसवई को ज्ञात होता है कि उसके पिता तथा माता–मही, उसके पुत्र–पुत्री के रूप में अवतरित हुए हैं।

संधि 4 में अभयरुचि तथा अभयमति अपने पूर्व जन्मों का स्मरण करके मुनि–व्रत लेने का विचार करते हैं, परन्तु अल्पवयस्क होने के कारण सुदत्त मुनि उन्हें क्षुल्लक के रूप में ही कुछ समय तक रहने का उपदेश देते हैं।

अपनी कथा समाप्त करते हुए अभयरुचि उसी क्षुल्लक रूप में राज सभा में उपस्थित किये जाने का उल्लेख करते हैं।

यह वृत्तान्त सुनकर राजा मारिदत्त को अत्यंत पश्चाताप होता है और वह जिन–दीक्षा लेने का निश्चय करते हैं।

सुदत्त मुनि, राजा मारिदत्त आदि के पूर्व जन्मों की कथाएँ सुनाते हैं। देवी चडमारि तथा भैरवानंद भी जैन धर्म में दीक्षित हो जाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. महापुराण, भाग–पाँच, पुष्पदंत, पी0एल0 वैद्य (संपा0), देवेन्द्र कुमार जैन (अनु0), भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पृ0 418–419
2. जैन साहित्य और इतिहास, नाथूराम प्रेमी, हिन्दी–ग्रंथ रत्नाकर (प्राइवेट) लिमिटेड, बम्बई, पृ0 226
3. महाकवि पुष्पदंत और उनका महापुराण, डॉ0 सुदर्शन मिश्र, पृ0 2
4. पुष्पदंत, योगेन्द्र शर्मा अरूण, पृ0 32
5. वाङ्मय विवेक, डॉ0 राजाराम पाण्डेय, पृ0 80
6. वही, पृ0 80
7. वही, पृ0 80
8. वही, पृ0 80
9. वही, पृ0 80
10. वही, पृ0 80
11. महापुराणम् (तृतीय खंड), पुष्पदंत, सं0–परशुराम शर्मा, मणिक चंद्र दिगम्बर जैन ग्रंथालय समिति, पृ0 11
12. जसहर चरिउ, पुष्पदंत, डॉ0 हीरालाल जैन (संपा0), भारतीय ज्ञानपीठ, पृ0 4
13. महाकवि पुष्पदंत और उनका महापुराण, डॉ0 सुदर्शन मिश्र, पृ0 18
14. वाङ्मय विवेक, डॉ0 राजनारायण पाण्डेय, पृ0 110
15. महापुराण, भाग–तीन, पुष्पदंत, पृ0 337
16. वाङ्मय विवेक, डॉ0 राजनारायण पाण्डेय, पृ0 121
17. पुष्पदंत, योगेन्द्र शर्मा 'अरूण', पृ0 47
18. हिन्दी के विकास में अपभ्रंश का योग, डॉ0 नामवर सिंह, पृ0 189
19. जसहर चरिउ, पुष्पदंत, डॉ0 हीरालाल जैन (संपा0), भारतीय ज्ञानपीठ, पृ0 4
20. वाङ्मय विवेक, डॉ0 राजनारायण पाण्डेय, पृ0 123
21. पुष्पदंत, योगेन्द्र शर्मा 'अरूण', पृ0 50
22. वही, पृ0 50
23. जसहरचरिउ, पुष्पदंत, डॉ0 हीरालाल जैन (संपा0 और अनु0), भारतीय ज्ञानपीठ, पृ0 28